THE RESEARCH DIALOGUE
An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed / Refereed Research Journal
ISSN: 2583-438X
© The Research Dialogue | Volume-05 | Issue-01 | April-2026
Available online at: https://theresearchdialogue.com/
DOI : https://doi.org/10.64880/theresearchdialogue.v5i1.68

आधुनिक युग में नारी शक्ति का परिवर्तनशील स्वरूप: एक समीक्षात्मक अध्ययन

श्वेता
शोधार्थी, शिक्षा विभाग, केन्द्रीय शिक्षा संस्थान, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सारांश

भारतीय आधुनिक युग में नारी की भूमिका एक सतत परिवर्तनशील और प्रेरणादायी यात्रा रही है, जिसमें आत्मनिर्भरता, संघर्षशीलता और कर्तव्यनिष्ठा के स्वर एक साथ गूँजते हैं। नारी शक्ति केवल एक सामाजिक विचार तक सीमित नहीं रही, बल्कि यह समाज की प्रगति का एक अनिवार्य और सजीव आयाम बन चुकी है। वर्तमान समय में महिलाएँ शिक्षा, राजनीति, विज्ञान और अनेक व्यावसायिक क्षेत्रों में सक्रिय रूप से अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही हैं। भारतीय इतिहास की इस समृद्ध यात्रा में अहिल्याबाई होल्कर से लेकर सावित्रीबाई फुले तक, अनेक महिलाओं ने अपने जीवन-संघर्ष, साहस और दूरदृष्टि से समाज को नई दिशा दी है। आज की कार्यरत महिलाएँ सामाजिक और प्रशासनिक चुनौतियों का सामना करते हुए अपने कौशल और आत्मविश्वास से एक नई पहचान निर्मित कर रही हैं। प्रस्तुत शोधपत्र इसी ऐतिहासिक और समकालीन यात्रा का समीक्षात्मक विश्लेषण करता है और यह प्रतिपादित करता है कि आधुनिक नारी शक्ति का स्वरूप न केवल व्यक्तिगत, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का भी वाहक है।

कूट शब्द: *नारी शक्ति, आधुनिक भारत, सामाजिक परिवर्तन, महिला सशक्तीकरण, दार्शनिक विश्लेषण*

1. प्रस्तावना

जब हम किसी समाज की सभ्यता और संस्कृति को समझने का प्रयास करते हैं, तो उस समाज में नारी की स्थिति एक दर्पण की भाँति होती है, जिसमें उस समाज का समग्र स्वास्थ्य प्रतिबिम्बित होता है। भारतीय चिन्तन परम्परा में नारी को सदा ही एक विशिष्ट स्थान प्राप्त रहा है। ऋग्वेद की ऋषिका लोपामुद्रा हो, या उपनिषद् काल की विदुषी गार्गी, भारत ने अपने प्राचीनतम काल से ही स्त्री की मेधा और सामर्थ्य को पहचाना है। फिर भी यह भी सत्य है कि मध्यकाल से लेकर उपनिवेशकाल तक, भारतीय नारी को अनेक सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक बन्धनों के बीच जीना पड़ा। इसीलिए आधुनिक युग में नारी शक्ति का जो परिवर्तनशील स्वरूप उभरा है, वह उस दीर्घ संघर्ष की परिणति है जिसे इतिहास ने धीरे-धीरे और बड़ी कठिनाई से अपने भीतर समेटा है।

आधुनिक युग की प्रारम्भिक परिभाषा यदि हम स्वीकार करें, तो यह वह कालखण्ड है जब भारत में नवजागरण की लहरें उठीं और राष्ट्रीय चेतना के साथ-साथ स्त्री-चेतना का भी उदय हुआ। 19वीं शताब्दी में जब राजा राममोहन राय ने सती प्रथा के विरुद्ध आवाज उठाई, तब यह केवल एक सामाजिक सुधार नहीं था, बल्कि यह एक दार्शनिक घोषणा थी कि नारी का जीवन उसका अपना है, किसी की सम्पत्ति नहीं। उसी क्रम में ज्योतिराव फुले और सावित्रीबाई फुले ने जब बालिका-शिक्षा का बीज बोया, तो यह बीज आज एक विशाल वट वृक्ष बन चुका है जिसकी छाया में भारत की करोड़ों शिक्षित महिलाएँ खड़ी हैं। इस शोधपत्र का उद्देश्य आधुनिक भारत में नारी शक्ति के उस बहुआयामी और परिवर्तनशील स्वरूप को दार्शनिक, ऐतिहासिक और समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से समझना है। यह अध्ययन यह प्रश्न भी उठाता है कि क्या वर्तमान महिला सशक्तीकरण केवल आर्थिक भागीदारी तक सीमित

है, या इसके पीछे कोई गहरी दार्शनिक दृष्टि भी काम कर रही है। इसके साथ ही यह पेपर उन चुनौतियों का भी विश्लेषण करता है जो आज भी नारी के सम्पूर्ण विकास के मार्ग में बाधा बनकर खड़ी हैं।

इस शोध में कुछ प्रमुख संकल्पनाओं को स्पष्ट करना आवश्यक है। 'नारी शक्ति' से यहाँ तात्पर्य उस सामूहिक और वैयक्तिक सामर्थ्य से है जो स्त्री के भीतर निहित है और जो सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तन का कारक बनती है। 'परिवर्तनशील स्वरूप' का अभिप्राय उस निरन्तर विकासशील प्रक्रिया से है जिसमें नारी अपनी पहचान, अपना स्थान और अपना उद्देश्य नए सिरे से परिभाषित करती आई है। 'आधुनिक युग' से अभिप्राय 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से लेकर 21वीं शताब्दी के वर्तमान काल तक की उस यात्रा से है जिसमें भारत ने अनेक सामाजिक और सांस्कृतिक क्रान्तियाँ देखी हैं।

2. साहित्य समीक्षा

नारी शक्ति के दार्शनिक और समाजशास्त्रीय आयामों पर विद्वानों ने विभिन्न कालखण्डों में विचार किया है। इस विषय पर उपलब्ध साहित्य को यदि हम ध्यान से पढ़ें, तो कुछ महत्त्वपूर्ण धाराएँ स्पष्ट दिखाई देती हैं।

भारतीय नारीवादी चिन्तन के सन्दर्भ में उमा चक्रवर्ती का कार्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उनकी पुस्तक 'Rewriting History: The Life and Times of Pandita Ramabai' में यह स्थापित किया गया है कि भारत में स्त्री-मुक्ति का प्रश्न जाति, वर्ग और धर्म के प्रश्नों से अनिवार्यतः जुड़ा हुआ है। इसे केवल लैंगिक समानता के सरलीकृत ढाँचे में नहीं समझा जा सकता। इसी प्रकार रोहिणी अगरवाल ने हिन्दी साहित्य में नारी-चेतना का विस्तृत अध्ययन करते हुए यह दिखाया है कि प्रेमचन्द से लेकर महादेवी वर्मा तक के साहित्यकारों ने नारी को किस प्रकार एक सक्रिय कर्ता के रूप में चित्रित किया है।

पश्चिमी नारीवाद और भारतीय नारीवाद के बीच का तनाव भी साहित्य में स्पष्ट दिखाई देता है। सिमोन द बोवुआर का यह प्रसिद्ध कथन कि 'नारी पैदा नहीं होती, बल्कि बनाई जाती है' भारतीय सन्दर्भ में भी प्रासंगिक है, किन्तु भारतीय नारीवाद इस विचार को पूर्णतः स्वीकार नहीं करता। भारतीय नारी का संघर्ष पश्चिम की स्त्री के संघर्ष से भिन्न है क्योंकि यहाँ जाति-व्यवस्था, धार्मिक रूढ़ियाँ और औपनिवेशिक विरासत एक साथ मिलकर नारी की स्थिति को जटिल बनाती हैं।

परन्तु जो बात अधिकांश साहित्य में नहीं मिलती, वह है एक समन्वित दार्शनिक दृष्टिकोण जो भारतीय परम्परा, पश्चिमी चिन्तन और समकालीन वास्तविकता को एक साथ समेटे। नलिनी भानोत का कार्य इस दिशा में कुछ प्रयास करता है, जहाँ वे भारतीय शक्ति-दर्शन को आधुनिक नारी-चेतना से जोड़ती हैं। इसी प्रकार मृणाल पाण्डे की पत्रकारिता और विद्वत्ता ने यह दिखाया है कि भारतीय ग्रामीण महिला का सशक्तीकरण शहरी मध्यवर्गीय नारीवाद से किस प्रकार भिन्न है। वर्तमान शोधपत्र उस रिक्तता को भरने का प्रयास करता है जो इन विविध दृष्टिकोणों के बीच बनी हुई है।

3. समस्या अभिज्ञान और शोध का महत्त्व

किसी भी शोध की जड़ें उसकी समस्या में होती हैं। और इस शोधपत्र की केन्द्रीय समस्या यह है कि आधुनिक भारत में नारी शक्ति के परिवर्तनशील स्वरूप को हम प्रायः या तो आँकड़ों की भाषा में समझते हैं, या फिर भावनात्मक आदर्शों की भाषा में। इन दोनों के बीच एक दार्शनिक और समीक्षात्मक समझ का अभाव है।

यह एक ठोस तथ्य है कि भारत में आज महिला साक्षरता दर 70% से अधिक है, संसद में महिला प्रतिनिधित्व धीरे-धीरे बढ़ रहा है और उद्यमिता के क्षेत्र में महिलाओं की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। किन्तु इन्हीं आँकड़ों के साथ यह भी सत्य है कि राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो के आँकड़े बताते हैं कि महिलाओं के विरुद्ध अपराध में कमी नहीं आई है। घरेलू हिंसा, दहेज-प्रताड़ना, कार्यस्थल पर उत्पीड़न और लिंग-आधारित भेदभाव आज भी भारतीय समाज की गहरी सच्चाई हैं। तो प्रश्न यह उठता है कि क्या हमारा सशक्तीकरण वास्तविक है, या यह एक सतही परत है जिसके नीचे पुरानी पितृसत्तात्मक संरचनाएँ ज्यों की त्यों बनी हुई हैं?

इस शोध का महत्त्व इसीलिए है क्योंकि यह उस अन्तर्विरोध को समझने का प्रयास करता है। एक ओर जहाँ कल्पना चावला अन्तरिक्ष तक पहुँचती हैं, वहीं दूसरी ओर किसी गाँव में आज भी एक बेटी का जन्म अभिशाप माना जाता है। इस विरोधाभास को समझे बिना न तो नारी सशक्तीकरण की नीतियाँ प्रभावी हो सकती हैं, न ही शैक्षिक संस्थाएँ अपना दायित्व सही ढंग से निभा सकती हैं। अतः यह शोध न केवल अकादमिक महत्त्व का है, बल्कि इसके निष्कर्ष नीति-निर्माण और शैक्षिक पाठ्यक्रम के लिए भी दिशा-निर्देशक हो सकते हैं।

4. शोध प्रश्न, उद्देश्य एवं परिकल्पनाएँ

इस शोध के मार्गदर्शन के लिए निम्नलिखित प्रश्न निर्धारित किए गए हैं। पहला, आधुनिक भारत में नारी शक्ति का दार्शनिक और ऐतिहासिक विकास किस प्रकार हुआ है? दूसरा, वर्तमान समय में नारी सशक्तीकरण के समक्ष कौन-सी मूलभूत चुनौतियाँ विद्यमान हैं? तीसरा, भारतीय नारी-चेतना का वैश्विक नारीवाद से क्या सम्बन्ध है और कहाँ वह उससे भिन्न है?

इस शोध के प्रमुख उद्देश्य हैं, आधुनिक युग में नारी शक्ति के परिवर्तनशील स्वरूप का ऐतिहासिक क्रम में विश्लेषण करना, शिक्षा, राजनीति, अर्थव्यवस्था और संस्कृति में नारी की बदलती भूमिका का समीक्षात्मक अध्ययन करना और नारी सशक्तीकरण की सीमाओं एवं सम्भावनाओं को दार्शनिक दृष्टिकोण से रेखांकित करना। इस शोध की परिकल्पना यह है कि आधुनिक भारत में नारी शक्ति का स्वरूप एक रेखीय विकास नहीं, बल्कि एक जटिल, बहुस्तरीय और विरोधाभासी प्रक्रिया है जिसमें परम्परा और आधुनिकता का संघर्ष निरन्तर जारी है।

5. शोध संरचना

इस शोध का सैद्धान्तिक आधार तीन स्तम्भों पर टिका है। पहला स्तम्भ है भारतीय शक्ति-दर्शन, जिसमें नारी को सृष्टि की मूल ऊर्जा के रूप में देखा जाता है। देवी-माहात्म्य में वर्णित महाशक्ति का दर्शन केवल पौराणिक नहीं है, बल्कि इसमें स्त्री की अपरिमित क्षमता का एक गहरा सांकेतिक बोध है। जब दुर्गा सप्तशती में कहा जाता है 'या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता', तो यह उद्घोष एक दार्शनिक सत्य है जो स्त्री के भीतर की असीम शक्ति को पहचानता है।

दूसरा स्तम्भ है पश्चिमी नारीवादी सिद्धान्त, विशेषतः द्वितीय और तृतीय लहर का नारीवाद जिसने लिंग, शक्ति और सामाजिक संरचना के सम्बन्धों को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण वैचारिक उपकरण दिए। जूडिथ बटलर का 'gender performativity' का सिद्धान्त और बेल हुक्स का 'intersectionality' का विचार इस शोध में सहायक हैं। किन्तु इन्हें भारतीय सन्दर्भ में उपयोग करते समय सावधानी आवश्यक है।

तीसरा स्तम्भ है सामाजिक परिवर्तन का द्वन्द्वात्मक सिद्धान्त, जिसके अनुसार कोई भी सामाजिक परिवर्तन विरोधी शक्तियों के बीच संघर्ष से उत्पन्न होता है। इस दृष्टि से नारी-मुक्ति का संघर्ष पितृसत्ता और स्त्री-सामर्थ्य के बीच का वह ऐतिहासिक द्वन्द्व है जो अभी समाप्त नहीं हुआ है।

6. शोध प्रविधि

यह शोध मुख्यतः गुणात्मक और विवेचनात्मक पद्धति पर आधारित है। प्राथमिक स्रोतों के रूप में ऐतिहासिक दस्तावेज़, महिला नेताओं और विदुषियों के भाषण, आत्मकथाएँ और समकालीन साक्षात्कार सम्मिलित हैं। द्वितीयक स्रोतों में अकादमिक ग्रन्थ, शोधपत्र, सरकारी रिपोर्टें और समाचार-पत्रिकाएँ शामिल हैं।

शोध की पद्धति में तुलनात्मक-ऐतिहासिक विश्लेषण प्रमुख है, जिसमें विभिन्न कालखण्डों में नारी की स्थिति की तुलना की गई है। इसके साथ ही दार्शनिक-विमर्शात्मक पद्धति का उपयोग करके विचारों और तर्कों का मूल्यांकन किया गया है। इस शोध में नैतिक सावधानी का ध्यान रखा गया है और किसी भी महिला के व्यक्तिगत अनुभव को सामान्यीकरण के लिए उपयोग नहीं किया गया है।

7. समीक्षात्मक अध्ययन

7.1 ऐतिहासिक यात्रा: अंकुर से वटवृक्ष तक

भारतीय नारी शक्ति के परिवर्तन की कहानी 19वीं शताब्दी के उस समय से आरम्भ होती है जब भारत एक ओर औपनिवेशिक शासन की जकड़ में था, और दूसरी ओर नवजागरण की हवाएँ बहने लगी थीं। यह विरोधाभास स्वयं में बड़ा दिलचस्प है कि जिस उपनिवेशवाद ने भारत को राजनीतिक रूप से गुलाम किया, उसी ने कुछ हद तक नारी-शिक्षा और सुधार के लिए वातावरण भी तैयार किया। किन्तु यह श्रेय उपनिवेशवाद को नहीं, भारत के उन सुधारवादी चिन्तकों को जाता है जिन्होंने विदेशी शासन के बावजूद अपनी मातृभूमि की स्त्रियों की मुक्ति का स्वप्न देखा।

सावित्रीबाई फुले का जीवन इस सन्दर्भ में एक क्रान्तिकारी उदाहरण है। 1848 में जब उन्होंने पुणे में बालिकाओं के लिए पहला विद्यालय खोला, तब समाज ने उन्हें हर कदम पर रोकने की कोशिश की। रास्ते में गोबर और पत्थर फेंके गए, किन्तु वे रुकी नहीं। उनका यह कथन आज भी उतना ही प्रासंगिक है: 'पढ़ो और लिखो, क्योंकि यही वह हथियार है जो तुम्हें मुक्त करेगा।' यह केवल एक शैक्षिक घोषणा नहीं थी, यह एक दार्शनिक संकल्प था कि ज्ञान ही मुक्ति का मार्ग है।

इसी काल में अहिल्याबाई होल्कर की विरासत भी महत्त्वपूर्ण है। मालवा की इस रानी ने न केवल कुशल प्रशासन का परिचय दिया, बल्कि यह सिद्ध किया कि नारी में नेतृत्व की अपरिमित क्षमता होती है। उन्होंने मन्दिरों और घाटों का पुनर्निर्माण कराया, व्यापार को प्रोत्साहन दिया और न्यायपूर्ण शासन की स्थापना की। उनके शासन के बारे में जॉन मैल्कम ने लिखा था कि उन्होंने एक ऐसा राज्य बनाया जो उस काल के किसी भी राज्य से अधिक सुव्यवस्थित था।

20वीं शताब्दी में जब स्वाधीनता आन्दोलन की लहर उठी, तब भारतीय नारी ने अपने गृह-कक्षों से बाहर निकलकर सड़कों पर क्रान्ति का परचम लहराया। कस्तूरबा गाँधी, सरोजिनी नायडू, अरुणा आसफ अली, सुचेता कृपलानी जैसी महिलाओं ने यह सिद्ध कर दिया कि स्वतन्त्रता का संघर्ष केवल पुरुष का नहीं, स्त्री का भी उतना ही दायित्व है। सरोजिनी नायडू के शब्दों में, 'जब भारत की स्त्री जागेगी, तो भारत अवश्य जागेगा।' यह वाक्य उस समय की स्त्री-चेतना का एक अत्यन्त सशक्त अभिव्यक्ति है।

7.2 स्वतन्त्रता के बाद का परिदृश्य: अधिकार और वास्तविकता के बीच

1947 में जब भारत स्वतन्त्र हुआ, तो संविधान ने स्त्री को पुरुष के समकक्ष सभी मौलिक अधिकार प्रदान किए। यह स्वयं में एक क्रान्तिकारी कदम था क्योंकि विश्व के अनेक देश तब तक महिलाओं को मताधिकार देने में भी संकोच कर रहे थे। डॉ. बी.आर. आम्बेडकर ने संविधान में महिलाओं के अधिकारों को सुनिश्चित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनका मानना था कि जब तक महिलाएँ अपने अधिकारों के प्रति सचेत नहीं होंगी और जब तक समाज उन्हें समान दृष्टि से नहीं देखेगा, तब तक भारत का लोकतन्त्र अधूरा रहेगा।

किन्तु कागज पर लिखे अधिकार और जमीनी वास्तविकता के बीच का अन्तर बड़ा था। 1950 के दशक में भी भारत की अधिकांश महिलाएँ शिक्षा से वंचित थीं, बाल विवाह की प्रथा व्यापक थी और महिला की पहचान उसके पिता, पति या पुत्र के माध्यम से होती थी। इन्दिरा गाँधी का प्रधानमन्त्री बनना इस अर्थ में एक ऐतिहासिक क्षण था कि उन्होंने यह सिद्ध किया कि नारी सत्ता के सर्वोच्च पद पर भी बैठ सकती है। उनके बारे में यह कहा जाता था कि वे 'भारतीय राजनीति के पुरुषों में सबसे शक्तिशाली' थीं, जो स्वयं में एक व्यंग्यात्मक सत्य है।

7.3 शिक्षा का क्षेत्र: मुक्ति का सबसे बड़ा द्वार

यदि हम नारी शक्ति के परिवर्तन का सबसे महत्त्वपूर्ण कारक खोजें, तो वह है शिक्षा। भारत में महिला साक्षरता दर 1951 में मात्र 8.86 प्रतिशत थी, जो 2011 की जनगणना के अनुसार 65.46 प्रतिशत तक पहुँच गई और वर्तमान में यह 70 प्रतिशत से अधिक है। यह वृद्धि अपने आप में एक महाक्रान्ति है। जब एक महिला शिक्षित होती है, तो वह न केवल अपना जीवन बदलती है, बल्कि अपने पूरे परिवार और समुदाय को बदल देती है। कोफी अनान का यह कथन बिल्कुल सटीक है कि 'यदि तुम एक पुरुष को शिक्षित करते हो, तो तुम एक व्यक्ति को शिक्षित करते हो, किन्तु यदि तुम एक स्त्री को शिक्षित करते हो, तो तुम एक पूरे राष्ट्र को शिक्षित करते हो।'

उच्च शिक्षा में महिलाओं का प्रवेश एक विशेष रूप से उल्लेखनीय परिवर्तन है। आज विश्वविद्यालयों में महिला नामांकन पुरुषों के लगभग समकक्ष पहुँच रहा है। आईआईटी, आईआईएम और चिकित्सा संस्थानों में महिला विद्यार्थियों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, अभियन्त्रण और गणित के क्षेत्रों में भी महिलाएँ अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही हैं, जो परम्परागत रूप से पुरुष-प्रधान माने जाते थे।

7.4 राजनीतिक सहभागिता: शक्ति की पहचान

राजनीति वह क्षेत्र है जहाँ शक्ति का सबसे सीधा और दृश्यमान रूप होता है। भारत में महिला राजनीतिक सहभागिता का इतिहास उतार-चढ़ावों से भरा है। एक ओर जहाँ इन्दिरा गाँधी, सोनिया गाँधी और ममता बनर्जी जैसी महिलाओं ने सर्वोच्च राजनीतिक पदों पर अपनी योग्यता सिद्ध की है, वहीं दूसरी ओर संसद में महिला प्रतिनिधित्व अभी भी संतोषजनक नहीं है।

2023 में पारित नारी शक्ति वन्दन अधिनियम एक महत्त्वपूर्ण कदम है जो संसद और राज्य विधानसभाओं में 33 प्रतिशत महिला आरक्षण का प्रावधान करता है। यह कानून अपने आप में एक स्वीकारोक्ति है कि केवल समान अधिकारों से काम नहीं चलेगा, सकारात्मक भेदभाव की नीति आवश्यक है। पंचायती राज संस्थाओं में 50 प्रतिशत आरक्षण ने ग्रामीण स्तर पर महिला नेतृत्व को एक नई पहचान दी है। आज देश की लगभग 14 लाख से अधिक पंचायत प्रतिनिधि महिलाएँ हैं, जो जमीनी लोकतन्त्र में एक वास्तविक और सार्थक परिवर्तन का संकेत है।

7.5 आर्थिक सशक्तीकरण: स्वावलम्बन की राह

आर्थिक स्वतन्त्रता के बिना कोई भी सशक्तीकरण अधूरा है। भारत में महिला श्रम-शक्ति भागीदारी दर, जिसे अर्थशास्त्री FLFPR कहते हैं, एक जटिल और विरोधाभासी तस्वीर प्रस्तुत करती है। एक ओर जहाँ शहरी मध्यवर्गीय महिलाएँ कॉर्पोरेट जगत, सिविल सेवाओं और उद्यमिता में आगे बढ़ रही हैं, वहीं दूसरी ओर ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक स्थिति अभी भी चिन्ताजनक है। स्वयं सहायता समूहों (SHGs) ने इस क्षेत्र में एक उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। बैंक सखी, आजीविका मिशन और महिला उद्यमिता कार्यक्रमों ने लाखों महिलाओं को आर्थिक रूप से सक्षम बनाया है।

किरण मजूमदार-शॉ, फाल्गुनी नायर, इन्दिरा नूई और रश्मि सालूजा जैसी उद्यमी महिलाओं ने यह सिद्ध कर दिया है कि नारी केवल एक कर्मचारी नहीं, बल्कि एक दूरदर्शी नेतृत्वकर्ता भी हो सकती है। किन्तु इन उदाहरणों को सम्पूर्ण नारी-वर्ग का प्रतिनिधि मान लेना भ्रामक होगा। सच यह है कि भारत में अभी भी विशाल बहुमत में महिलाएँ असंगठित क्षेत्र में काम करती हैं, जहाँ न उचित वेतन मिलता है, न सामाजिक सुरक्षा।

7.6 विज्ञान और प्रौद्योगिकी: नई ऊँचाइयाँ

कल्पना चावला का अन्तरिक्ष में जाना केवल एक व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं थी, वह भारत की करोड़ों बेटियों के लिए एक सन्देश था कि आकाश की भी कोई सीमा नहीं है। उसी परम्परा में सुनीता विलियम्स, टेसी थॉमस (जिन्हें 'मिसाइल वुमन ऑफ इण्डिया' कहा जाता है) और चन्द्रयान-3 में योगदान देने वाली अनेक महिला वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया है कि विज्ञान का कोई लिंग नहीं होता। इसरो में आज महिला वैज्ञानिकों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। मंगलयान मिशन में महिला वैज्ञानिकों की भागीदारी ने अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर भारत की छवि को एक नया आयाम दिया। रीता तेवतिया और अन्नपूर्णी सुब्रमण्यम जैसी वैज्ञानिकों ने खगोल विज्ञान में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। यह सब यह बताता है कि भारतीय नारी की बौद्धिक क्षमता किसी भी अर्थ में पुरुष से कम नहीं है। अवसर मिलने पर वह उसी ऊँचाई तक पहुँचती है, बल्कि कई बार उससे भी आगे।

7.7 सांस्कृतिक और साहित्यिक आयाम

नारी शक्ति का एक महत्त्वपूर्ण आयाम सांस्कृतिक और साहित्यिक है। महादेवी वर्मा ने 'श्रृंखला की कड़ियाँ' में भारतीय नारी की पीड़ा और संघर्ष को ऐसे शब्दों में व्यक्त किया जो आज भी हृदय को छू जाते हैं। उन्होंने लिखा था, 'भारतीय नारी का जीवन एक ऐसी यात्रा है जो आरम्भ होती है आँसुओं में और समाप्त होती है मौन में।' किन्तु उनका यह कथन एक चुनौती भी था कि इस मौन को तोड़ना होगा। और आज की महिला लेखिकाओं ने उस मौन

को तोड़ा है। मृदुला गर्ग, नासिरा शर्मा, कृष्णा सोबती, महाश्वेता देवी और अरुन्धती रॉय ने अपनी रचनाओं में नारी की आवाज को एक सशक्त साहित्यिक रूप दिया है।

8. समालोचनात्मक परिचर्चा

8.1 परिवर्तन की सीमाएँ और अन्तर्विरोध

जब हम नारी शक्ति के परिवर्तनशील स्वरूप की प्रशंसा करते हैं, तो यह आवश्यक है कि हम उसकी सीमाओं और अन्तर्विरोधों पर भी ईमानदारी से विचार करें। क्योंकि बिना आलोचनात्मक दृष्टि के, कोई भी समीक्षा केवल स्तुतिगान बन जाती है। पहली बात यह कि भारत में नारी सशक्तीकरण एक अत्यन्त असमान और खण्डित प्रक्रिया है। शहरी और ग्रामीण, उच्च जाति और दलित-आदिवासी, उच्च वर्ग और निम्न वर्ग की महिलाओं के अनुभव अत्यन्त भिन्न हैं। जब हम इन्दिरा गाँधी या इन्दिरा नूई की उपलब्धियों की बात करते हैं, तो हमें यह भी याद रखना होगा कि उसी भारत में आज भी राजस्थान, बिहार और उत्तर प्रदेश के दूरदराज के गाँवों में बालिकाएँ स्कूल छोड़ने पर विवश होती हैं। यह असमानता केवल आर्थिक नहीं, संरचनात्मक है। दूसरी बात, पितृसत्ता की प्रकृति बदल गई है, किन्तु उसका अस्तित्व समाप्त नहीं हुआ। आज की पितृसत्ता अधिक परिष्कृत, अधिक अदृश्य और इसीलिए अधिक खतरनाक है। 'टोकन महिलावाद' की अवधारणा इस सन्दर्भ में प्रासंगिक है, जिसका अर्थ है कि एक या दो महिलाओं को उच्च पदों पर बिठाकर यह दर्शाना कि व्यवस्था लिंग-तटस्थ है, जबकि वास्तव में ढाँचा वैसा ही पितृसत्तात्मक बना रहता है। कॉर्पोरेट जगत में 'ग्लास सीलिंग' का अस्तित्व आज भी सर्वविदित है। महिलाएँ एक स्तर तक तो आगे बढ़ जाती हैं, किन्तु शीर्ष नेतृत्व में उनकी संख्या अभी भी नगण्य है।

तीसरी बात, डिजिटल युग ने नारी सशक्तीकरण के नए अवसर तो प्रदान किए हैं, किन्तु नई चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं। सोशल मीडिया जहाँ एक ओर महिलाओं को एक मंच देता है, वहीं साइबर हैरसमेंट, ट्रोलिंग और डिजिटल हिंसा भी नई समस्याएँ हैं। #MeToo आन्दोलन ने भारत में 2018 में एक बड़ी लहर उत्पन्न की और अनेक प्रभावशाली पुरुषों के विरुद्ध महिलाओं ने साहसपूर्वक आवाज उठाई। यह आन्दोलन इस बात का प्रमाण है कि नारी-चेतना जागृत हो रही है, किन्तु साथ ही यह इस बात का भी प्रमाण है कि कार्यस्थलों पर यौन उत्पीड़न की समस्या कितनी गहरी और व्यापक है।

8.2 परम्परा और आधुनिकता का द्वन्द्व

भारतीय नारी के सम्मुख एक विशिष्ट और जटिल चुनौती यह है कि उसे एक साथ दो दुनियाओं में जीना है। परिवार उससे परम्परागत भूमिकाओं की अपेक्षा करता है और समाज उससे आधुनिक उपलब्धियों की। यह 'डबल बर्डन' या दोहरा बोझ भारतीय कामकाजी महिला की सबसे बड़ी समस्याओं में से एक है। ऑफिस में एक सफल प्रोफेशनल होने के बाद घर आकर फिर से सब कुछ सँभालने की जिम्मेदारी उठाना एक ऐसी थकान उत्पन्न करता है जिसे शायद शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। इस सन्दर्भ में यह प्रश्न उठता है कि क्या आधुनिकता और परम्परा के बीच का यह संघर्ष अनिवार्य है, या यह एक ऐसा निर्मित द्वन्द्व है जिससे पितृसत्ता को लाभ होता है? जब परम्परा यह तय करती है कि घर की सफाई, बच्चों की देखभाल और बुजुर्गों की सेवा 'स्त्री का काम' है, तो यह परम्परा वास्तव में एक राजनीतिक निर्मिति है, न कि कोई प्राकृतिक व्यवस्था। इसलिए आधुनिक नारी-चेतना का एक महत्त्वपूर्ण कार्य यह है कि वह परम्परा के नाम पर स्थापित उन नियमों को प्रश्नांकित करे जो उसे दोयम दर्जे पर रखते हैं।

8.3 दर्शन का आयाम: मुक्ति की परिभाषा

यहाँ एक गहरा दार्शनिक प्रश्न है जो इस शोध को सतह से उठाकर गहराई में ले जाता है। और वह प्रश्न है कि नारी मुक्ति से अभिप्राय क्या है? क्या यह केवल आर्थिक स्वतन्त्रता है? क्या यह राजनीतिक अधिकार है? या यह कुछ और गहरी और व्यापक चीज है?

भारतीय दार्शनिक परम्परा में विदुषी गार्गी का उदाहरण इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय है। बृहदारण्यक उपनिषद् में वर्णित वह प्रसंग, जिसमें गार्गी याज्ञवल्क्य से शास्त्रार्थ करती है, बताता है कि भारतीय स्त्री की मुक्ति की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। किन्तु उपनिषदकालीन मुक्ति और आधुनिक सशक्तीकरण में एक अन्तर है। प्राचीन मुक्ति प्रायः आध्यात्मिक थी, जबकि आधुनिक सशक्तीकरण की माँग है सामाजिक और राजनीतिक समानता। और यह माँग

किसी भी तरह से अनुचित नहीं है। एक दृष्टि से देखा जाए तो नारी मुक्ति की सबसे गहरी परिभाषा वह है जो रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने दी थी। उनका मानना था कि स्वतन्त्रता केवल बाहरी नहीं, आन्तरिक भी होनी चाहिए। जब तक स्त्री के मन में स्वयं को 'कमतर' मानने की भावना है, तब तक बाहरी अधिकार देने से कुछ नहीं बदलेगा। इसीलिए शिक्षा और चेतना इस प्रक्रिया के केन्द्र में हैं। वास्तविक सशक्तीकरण वह है जब नारी स्वयं अपनी शर्तों पर अपना जीवन परिभाषित करे।

8.4 आदिवासी और दलित नारी: हाशिये की आवाज

मुख्यधारा की नारीवादी चर्चा में एक बड़ी कमी यह रही है कि आदिवासी और दलित महिलाओं की आवाज प्रायः उपेक्षित रह जाती है। सावित्रीबाई फुले की विरासत को याद करते समय हमें यह भी याद रखना होगा कि वे एक दलित महिला थीं जिन्होंने जाति और लिंग दोनों के विरुद्ध एक साथ संघर्ष किया। फुले दम्पति का संघर्ष यह बताता है कि नारी-मुक्ति और जाति-मुक्ति को अलग नहीं किया जा सकता।

आज भी भारत में आदिवासी क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति, उनके भूमि-अधिकार, उनकी स्वास्थ्य सुविधाएँ और उनकी शिक्षा की स्थिति अत्यन्त चिन्ताजनक है। नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में आदिवासी महिलाएँ एक साथ कई स्तरों पर हिंसा का सामना करती हैं। इस सन्दर्भ में महाश्वेता देवी का साहित्य और उनका सक्रियतावाद विशेष महत्त्व रखता है। उनकी रचना 'हाजार चुराशीर माँ' और 'द्रौपदी' ने हाशिये की महिलाओं की व्यथा को साहित्य का विषय बनाया।

8.5 वैश्वीकरण और नारी: अवसर और खतरे

वैश्वीकरण ने भारतीय महिलाओं के लिए नए आर्थिक अवसर खोले हैं, विशेषतः सूचना प्रौद्योगिकी और सेवा क्षेत्र में। किन्तु इसी वैश्वीकरण ने कुछ नई समस्याएँ भी उत्पन्न की हैं। उपभोक्तावादी संस्कृति ने नारी को एक बाजार-उत्पाद के रूप में देखना प्रारम्भ किया है, जहाँ उसकी देह और उसका रूप-रंग एक व्यावसायिक वस्तु बन जाती है। विज्ञापन उद्योग, फिल्म उद्योग और फैशन उद्योग में नारी के चित्रण को देखकर यह समझ में आता है कि आधुनिकता के आवरण में भी नारी की वस्तुकरण की प्रवृत्ति समाप्त नहीं हुई है, बल्कि कहीं-कहीं अधिक परिष्कृत रूप में जारी है।

दूसरी ओर, वैश्विक नारीवादी आन्दोलनों से भारतीय महिलाओं की एकजुटता भी बढ़ी है। #MeToo, #TimesUp और #NirbhayaJustice जैसे आन्दोलनों ने यह दिखाया है कि नारी-संघर्ष अब राष्ट्रीय सीमाओं से परे जा चुका है। यह वैश्विक एकजुटता नारी शक्ति का एक नया और उत्साहजनक स्वरूप है।

8.6 शिक्षा की भूमिका और शैक्षिक संस्थाओं का दायित्व

इस सन्दर्भ में यह विचार करना आवश्यक है कि महिला महाविद्यालय और विश्वविद्यालय जैसी संस्थाएँ नारी सशक्तीकरण में क्या भूमिका निभा सकती हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय के श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला महाविद्यालय जैसी संस्थाएँ न केवल शैक्षिक केन्द्र हैं, बल्कि वे सांस्कृतिक और सामाजिक परिवर्तन के भी केन्द्र हैं। यहाँ पढ़ने वाली छात्राएँ अपने परिवार और समुदाय में एक सकारात्मक परिवर्तन का माध्यम बनती हैं।

शिक्षण-संस्थाओं का दायित्व केवल पाठ्यक्रम पढ़ाना नहीं है। उन्हें नारी-चेतना, आलोचनात्मक सोच और सामाजिक न्याय की समझ भी विकसित करनी होगी। पाठ्यपुस्तकों में नारी के चित्रण पर ध्यान देना, महिला रोल मॉडलों को पाठ्यक्रम में स्थान देना और एक ऐसे शैक्षिक वातावरण का निर्माण करना जहाँ हर छात्री अपनी पूरी क्षमता को प्रकट कर सके, ये सब उन संस्थाओं के अपरिहार्य दायित्व हैं।

8.7 मानसिक स्वास्थ्य और नारी: एक उपेक्षित आयाम

नारी सशक्तीकरण की चर्चा में मानसिक स्वास्थ्य का प्रश्न प्रायः नजरअन्दाज किया जाता है। किन्तु यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आयाम है। जब एक महिला घर और बाहर का दोहरा बोझ उठाती है, जब वह सामाजिक अपेक्षाओं के दबाव में जीती है, जब उसे अपनी भावनाओं और इच्छाओं को दबाकर चलना पड़ता है, तो उसके मानसिक स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव पड़ता है। भारत में महिलाओं में अवसाद और चिन्ता के मामले तेजी से बढ़ रहे

हैं। इसलिए वास्तविक सशक्तीकरण केवल बाहरी अवसरों का विस्तार नहीं है, बल्कि यह भी आवश्यक है कि महिला अपने भीतर से मजबूत हो, अपनी भावनात्मक आवश्यकताओं को पहचाने और एक स्वस्थ मानसिक जीवन जी सके। इस दृष्टि से नारी सशक्तीकरण का एक अत्यन्त गहरा और व्यक्तिगत पक्ष भी है जिसे समाज और नीति-निर्माताओं को स्वीकार करना होगा।

8.8 भविष्य की दिशा: एक आशापूर्ण दृष्टि

इन सब चुनौतियों और अन्तर्विरोधों के बावजूद, भारतीय नारी शक्ति का भविष्य आशाजनक है। क्योंकि जो परिवर्तन हो रहे हैं, वे केवल ऊपर से थोपे गए नहीं हैं, बल्कि नारी की अपनी चेतना और संकल्प से उत्पन्न हो रहे हैं। जब एक दलित लड़की पहली पीढ़ी की स्नातक बनती है, जब एक आदिवासी महिला ग्राम पंचायत की प्रधान बनती है, जब एक छोटे शहर की बेटी अन्तरिक्ष वैज्ञानिक बनती है, तो यह परिवर्तन किसी सरकारी योजना का परिणाम मात्र नहीं होता। यह उस अदम्य मानवीय जिजीविषा का प्रमाण होता है जो हर बाधा को पार कर आगे बढ़ती है।

अमर्त्य सेन का 'capabilities approach' इस सन्दर्भ में बहुत उपयोगी है। उनका मानना है कि विकास का अर्थ केवल आर्थिक समृद्धि नहीं, बल्कि यह है कि प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, अपनी सम्पूर्ण मानवीय क्षमताओं को साकार कर सके। इस दृष्टि से नारी सशक्तीकरण एक मानवाधिकार का प्रश्न है, न केवल एक नीतिगत प्राथमिकता।

9. उपसंहार

इस दीर्घ और बहुआयामी विवेचन के अन्त में हम एक ऐसे निष्कर्ष पर पहुँचते हैं जो न तो अत्यन्त आशावादी है और न ही निराशावादी, बल्कि यथार्थवादी और सचेत है।

आधुनिक युग में भारतीय नारी शक्ति का स्वरूप निश्चय ही परिवर्तित हुआ है और यह परिवर्तन अपूर्व और ऐतिहासिक है। वह नारी जो कभी केवल परदे के पीछे थी, आज संसद में बोलती है, प्रयोगशाला में अनुसन्धान करती है, अदालत में न्याय दिलाती है, और रणभूमि में देश की रक्षा करती है। यह यात्रा, जो सावित्रीबाई फुले के पहले विद्यालय से आरम्भ हुई थी, आज एक विशाल और बहुमुखी आन्दोलन बन चुकी है।

किन्तु यह यात्रा अभी समाप्त नहीं हुई है। जब तक भारत के हर कोने में हर जाति, हर धर्म और हर वर्ग की महिला को समान अवसर और सम्मान नहीं मिलता, तब तक यह काम पूरा नहीं होगा। जब तक घरेलू हिंसा, दहेज प्रथा, बाल विवाह और लिंग-भेदभाव पूरी तरह समाप्त नहीं होता, तब तक नारी सशक्तीकरण के उत्सव अधूरे रहेंगे।

इस शोधपत्र का मूल योगदान यह है कि इसने नारी शक्ति को केवल एक सामाजिक नीति के विषय के रूप में नहीं, बल्कि एक दार्शनिक और मानवीय प्रश्न के रूप में देखा है। नारी की मुक्ति केवल नारी का नहीं, पूरे समाज का प्रश्न है। जिस समाज में नारी को बराबरी का स्थान मिलता है, वह समाज न केवल अधिक न्यायपूर्ण होता है, बल्कि अधिक समृद्ध, अधिक सृजनशील और अधिक मानवीय भी होता है।

अन्त में, इस पेपर को एक उद्धरण से समाप्त करना उचित होगा जो स्वामी विवेकानन्द का है। उन्होंने कहा था, 'जब तक भारत की नारी को उचित स्थान नहीं मिलेगा, तब तक भारत का विकास सम्भव नहीं।' यह कथन आज भी, एक सदी से भी अधिक समय बाद, उतना ही सच और उतना ही आग्रहपूर्ण है। नारी शक्ति का परिवर्तनशील स्वरूप अभी अपने सबसे उज्ज्वल अध्याय में प्रवेश कर रहा है और यह अध्याय लिखा जाएगा हर उस बेटी के हाथों से जो आज किसी गाँव, किसी कस्बे, किसी शहर में, किसी बाधा को पार करते हुए आगे बढ़ रही है।

सन्दर्भ सूची

- Ambedkar, B. R. (1948). *The untouchables: Who were they and why they became untouchables?* Amrit Book Company.
- Chakravarti, U. (1998). *Rewriting history: The life and times of Pandita Ramabai.* Kali for Women.

- Gandhi, M. K. (1958). *Women and social reform*. Navajivan Publishing House.
- Tagore, R. (1916/2005). *The home and the world (Ghare-Baire)*. Penguin Classics.
- Devi, M. (1977/1997). *Mother of 1084*. Seagull Books.
- Naidu, S. (1912). *The bird of time: Songs of life, death & the spring*. William Heinemann.
- Pandey, M. (2003). *Bhartiya mahila: Ek badalta hua paridrishya*. National Book Trust.
- Phule, S. (1854/1988). *Kavya Phule*. Government of Maharashtra.
- Beauvoir, S. de. (1949/2011). *The second sex*. Vintage Books.
- Mehta, U. (2001). *Women in the Indian freedom struggle*. Publications Division.
- Verma, M. (1931/2001). *Shrinkhala ki kadiyan*. Lokbharati Prakashan.
- Sen, A. (1999). *Development as freedom*. Oxford University Press.
- National Crime Records Bureau. (2022). *Crime in India 2022*. Ministry of Home Affairs. https://ncrb.gov.in
- International Institute for Population Sciences (IIPS), & ICF. (2021). *National Family Health Survey (NFHS-5), 2019–21: India report*. IIPS.
- Office of the Registrar General & Census Commissioner, India. (2011). *Census of India 2011: Literacy data*. Government of India. https://censusindia.gov.in

Cite this Article

श्वेता, "आधुनिक युग में नारी शक्ति का परिवर्तनशील स्वरूप: एक समीक्षात्मक अध्ययन" The Research Dialogue, Open Access Peer reviewed & Refereed Journal, Pp-667–675, Volume-05, Issue-01, April-2026, https://theresearchdialogue.com/

This is an Open cess Journal / article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License CC BY-NC-ND 3.0) which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited. All rights reserved.

CERTIFICATE

of Publication

This Certificate is proudly presented to

श्वेता

For publication of Research Paper title

आधुनिक युग में नारी शक्ति का परिवर्तनशील स्वरूप: एक समीक्षात्मक अध्ययन

Dialogue' Peer-Reviewed / Refereed Research Journal and E-ISSN: 2583-438X, Volume-05, Issue-01, Month April, Year-2026, Impact Factor (RPRI-4.73)

Dr. Lohans Kumar Kalyani
Editor- In-chief

Dr. Neeraj Yadav
Executive-In-Chief- Editor

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at: https://theresearchdialogue.com/

DOI : https://doi.org/10.64880/theresearchdialogue.v5i1.68